राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय।

प्रेम सन्देस

शब्द २

सुन सुन रहा न जाय महिमा सतगुरु की। टेक।
मछरी पड़ी भँवर के माहीं वहती वेवस धार।
ठहरन को कहिं ठौर न पावे मछुवा खड़ा रे किनार।१।
सतगुरु पुरुष सुजान हैं रे जुक्ति कहें वह सार।
झीनी धार पकड़ सुत मछरी पहुँचे सिन्ध मँझार।२।
पंछी पड़ा वहलिये वस में दिया पिंजरे डार।
निकसनकीकोइराह न पावे हार गया पर मार।३।
सतगुरु पुरुष सुजान हैं रे मंत्र कहें इक कार।
जाके जपे पलक इक छिनमें खुलजाय पिंजरा किवाड़।४।
जीव बँधा देही के भीतर जरे आस की नार।
जहाँ तहाँ पर मुख जव मारे मुख में पड़ती छार।५।
सतगुरु पुरुष सुजान हैं रे राधास्वामी के औतार।
प्रीति करा जिव वन्द छुड़ावें आस त्रास दें टार।६।

शब्द ३

गुरू ने मोंहिं (हमारे गुरु) ऐसा रतन वढ़ दिया। टेक।
भाव घटे नहिं मोल न उतरे, मोहरछाप सिर किया।१।

खर्च किये से बढ़ता निसदिन, घर दूर सब भर दिया । २ ।
चोर न जाने साह न पावे, सुरती में धर लिया । ३ ।
ना गुन अरखे न औगुन परखे, अपनी मेहर कर दिया । ४ ।
राधास्वामी सतगुरु नाम रतन दे, निर्धन धनवर किया । ५ ।

शब्द ४

हित की बात खोल कहूँ प्यारे गुरु पूरे का खोज लगाना ।टेक।
जो चाहो छूटन या जग से गुरु पूरे का खोज लगाना ।१।
गुरु बिन सब जिव उरझ रहे हैं गुरु पूरे का खोज लगाना ।२।
निज घर में जो पहुँचा चाहो गुरु पूरे का खोज लगाना ।३।
बिन गुरु राह न मिलिहै भाई गुरु पूरे का खोज लगाना ।४।
बिन गुरु चालन चालिहै इक दिन गुरु पूरे का खोज लगाना ।५।
भजन भक्ति का जो रस चाहो गुरु पूरे का खोज लगाना ।६।
बिन गुरुभक्ति भजन सब थोथे गुरु पूरे का खोज लगाना ।७।
गुरु पूरे भगवन्त पहिचानो गुरु पूरे का खोज लगाना ।८।
बिन भगवन्त भक्ति कहो कैसी गुरु पूरे का खोज लगाना ।९।
मत भूलो कर कर मनरंजन गुरु पूरे का खोज लगाना ।१०।
सन्तबचन पर जो है निश्चय गुरु पूरे का खोज लगाना ।११।
सतगुरु सन्त की आज्ञा यहही गुरु पूरे का खोज लगाना ।१२।
सतगुरु सन्त की मेहर जो माँगो गुरु पूरे का खोज लगाना ।१३।
सतगुरु मिले मिले कुलदेवा गुरु पूरे का खोज लगाना ।१४।
गुरु बिन और न मालिक दूजा गुरु पूरे का खोज लगाना ।१५।
यही जुक्ति मालिक मिलने की गुरु पूरे का खोज लगाना ।१६।

मालिक से बेमुख नाहिं चाहें गुरु पूरे का खोज लगाना।१७।
यही बचन है मूल सबन का गुरु पूरे का खोज लगाना।१८।
राधास्वामी कहें तुम हित कर मानो गुरु पूरे का खोज लगाना।

शब्द ५

समझ मोहिं आइ आज गुरु बात । टेक ।
निज घर है अति दूर ठिकाना ।
राह बिकट बल ज़ोर न गात । १ ।
बिन गुरु प्रीती काज न सरि है ।
बिन प्रीती को कमर बँधात । २ ।
गुरु का कहना चित धर सुनिये ।
बात कहें गुरु हित की छाँट । ३ ।
करनी से मुख कभी न फेरो ।
जहँ लग अपनी पार बसात । ४ ।
करनी किये बिन बल नहिं आवे ।
बिन बल कैसे पंथ चलात । ५ ।
पंथ चले बिन घर रहे दूरी ।
काल करम नित करें उत्पात । ६ ।
भाग जगे हुई सुरत सुहागिन ।
सतगुरु आय मिले मोहिं नाथ । ७ ।
अब मैं चेत करूँ नित करनी ।
जामें चाल चले दिन रात । ८ ।
सहज सहज घट में पग धारूं ।
सहसकमल त्रिकुटी सुन घाट । ९ ।

इनसे होय कर भँवरगुफ़ा होय ।
सतपुर पहुँचूँ बीन बजात । १० ।
अलख अगम लख निज घर पाऊँ ।
राधास्वामी सतगुरु की निज दात । ११ ।

गुरुभक्ति ।

सन्त मत अर्थात् राधास्वामी मत में गुरुभक्ति पर बहुत ज़्यादः ज़ोर दिया है । यहाँ तक फ़रमाया है कि बग़ैर गुरुभक्ति के रत्तीभर परमार्थ नहीं बन सकता और जो लोग बिला गुरुभक्ति किये अभ्यास में पचते हैं वह मूर्ख हैं । बचन है कि—

'गुरुभक्ती' जब लग नहिं पूरी, मन मनसा तब लग नहिं चूरी ।
मन चूरे बिन सुरत न निर्मल, कैसे चढ़े और लगे शब्द चल ॥'

और यह भी फ़रमाया है कि अव्वल गुरुभक्ति दृढ़ता के साथ करो क्योंकि बग़ैर इसके जगत के मोह यानी मोटे बंधन कभी नहीं कट सकते हैं और जब तक मोटे बंधन नहीं कटे झीने बंधन चित्त के कैसे कट सकते हैं । गरज़ कि कुल परमार्थ का दारोमदार गुरुभक्ति ही पर रक्खा है और वाज़ह हो कि यह कोई नई बात नहीं है । बहुत से दूसरे मतों के बुज़ुर्गों ने भी इस उसूल की पाबंदी पर बहुत ज़ोर दिया है । और सच तो यह है कि जितने भी सच्चे साध, संत, महात्मा व पीर, पैग़म्बर, औलिया इस संसार में आये उन सभों ने गुरुभक्ति की तालीम दी और अपने चरन-

सेवकों से अपनी भक्ति करवा कर उनको दूसरे साधन कमाने का अधिकारी बनाया।

गुरुभक्ति प्रीतिवस होकर तन, मन, धन व सुरत से सतगुरुसेवा करने को कहते हैं इसलिए जितनी भी सच्ची व गहरी और निर्मल प्रीति किसी के हृदय में गुरु-चरनों में होगी उतनी ही सच्ची व गहरी और निर्मल गुरु-भक्ति उससे बन आवेगी और उतनी ही क़ाबिलियत उसमें इस मलीन संसार से हट कर निर्मल चेतन धाम के तरफ़ चलने के लिए पैदा होगी। और चूँकि सतगुरु की यह महिमा है कि जो कोई जितनी प्रीति उनके चरनों से करता है उतनी ही प्रीति उसके अन्तर में सच्चे मालिक के चरनों के लिए पैदा होती है इसलिए सच्चाई के साथ गुरुभक्ति करने वाला ज़रूर सच्चा आशिक़ यानी चाहने वाला मालिक का बन जावेगा।

नतीजा यह निकला कि सच्चा परमार्थ कमाने के लिए सच्ची गुरुभक्ति करनी मुनासिब है और सच्ची गुरुभक्ति करने के लिए सच्ची प्रीति सतगुरु के चरनों में होनी ज़रूरी है। गोया कि सतगुरु चरन की प्रीति हृदय में होने से ही सच्चा परमार्थ कमाया जा सकता है। सतगुरु चरन में प्रीति का जागना ऐसा मुश्किल नहीं है जैसा कि उस का क़ायम रहना है। उन दयाल की किसी प्रेमी से महिमा सुन कर या अपने कारोबार में उनकी दया व मदद से कोई नतीजा हस्ब मर्ज़ी प्राप्त होने पर परमार्थी का नरम हृदय

प्रीति में भर जाता है। मगर यह हालत थोड़ी देर के बाद जाती रहती है। चाहिए तो यह कि यह प्रीति ज़्यादः से ज़्यादः निर्मल व गहरी होती जावे ताकि ज़्यादः से ज़्यादः हृदय की शुद्धता प्राप्त हो लेकिन अगर यह बढ़े नहीं तो कम से कम उतनी तो ज़रूर बनी रहे मगर आम तौर पर ऐसा नहीं होता। इसका कारन क्या है एक दृष्टान्त से समझाते हैं।

फ़र्ज़ करो कि एक शख़्स है जो किसी नये कारख़ाने में नौकरी हासिल करके दिलोजान से काम करता है और अपने आराम व तकलीफ़ का कुछ ख़याल नहीं करता। कुछ अरसे के बाद कारख़ाना चल निकलता है और आमदनी कसरत से होने लगती है। ऐसा होने पर कुदरती तौर पर उसके दिल में चाह पैदा होती है कि मालिक कारख़ाना उसकी तरक्क़ी करे और अगर उसको तरक्क़ी नहीं मिलती तो उसका दिल टूट जाता है और कुछ अरसे के अंदर दूसरी जगह नौकरी तलाश करके चला जाता है। एक दूसरा शख़्स है जिसने ऐसे ही कारख़ाने में काम किया और बराबर तरक्क़ी भी पाई लेकिन बीस पच्चीस बरस बाद कोई बड़ी आसामी ख़ाली होने पर मालिक कारख़ाना उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ यह आसामी (जिसको वह अपना हक्क़ समझता है) उसको नहीं देता है। ऐसा होने पर अव्वल यह अरज़ मारूज़ करता है और अगर सुनाई नहीं होती तो यह इधर उधर बीमारी वग़ैरः का बहाना करके लम्बी रुख़सत ले लेता है और कारख़ाने से

टूट कर अलहिदा हो बैठता है। इन दोनों मिसालों से ज़ाहिर होगा कि मन का यह स्वभाव है कि कुछ अरसा या ज़्यादः अरसा तक किसीकी ख़िदमत करने के बाद भी ज़रासा अपने हस्ब मर्ज़ी इन्तिज़ाम न होने पर अव्वल तो टूट जाता है वरनः रूखा फीका तो ज़रूर हो जाता है। वाज़ह हो कि परमार्थ में शरीक़ होने पर भी यह मन इस अंग में बराबर बरतता है और अगर चरनों में लगने के कुछ अरसा बाद सतगुरु की ऐसी मौज न हुई कि इसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ इसका स्वार्थी परमार्थी इन्तिज़ाम हो तो यह सिकुड़ने लगता है और अगर पाँच सात बातें लगातार ऐसी ज़हूर में आईं जो न सिर्फ़ इसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हों बल्कि जिनसे इसको ज़रा ज़्यादः बेचैनी हो तो ऐसी हालत में यह निरास होकर क़तई रूखा फीका और बाज़ औक़ात क्रोध में भरकर परमार्थ का विरोधी बन जाता है। जब तक ज़िन्दगी है तरह तरह की हालतों का ज़हूर में आना और उनके मुतअल्लिक़ चाह का पैदा होना मामूली बात है और यह नहीं हो सकता कि हर किसी परमार्थी की चाह के बमूजिब दुनिया का सब काम काज चले और जब ऐसा न हुआ तो प्रीति का डावाँडोल रहना और किसी किसी हालत में बिलकुल गिर जाना कोई अचरज की बात न रही। इसलिए ऐसे शौक़ीन परमार्थी को जो गुरुचरन की प्रीति अडोल क़ायम रखना चाहता है लाज़मी हुआ कि हर हालत में राज़ी व रज़ा रहने की आदत डाले और किसी भी स्वार्थी परमार्थी वस्तु या हालत की माँग न माँगे और

सदा याद रक्खे कि इस उसूल को मद्दे नज़र न रखने के ही वजह से परमार्थियों की प्रीति झकोले खाया करती है। स्वार्थी माँग व चाह के अंदर सब संसारी बातें आ गईं और परमार्थी माँग में अंतर में प्रकाश व तमाशा देखना और किसी धाम वग़ैरः का खुलना वग़ैरः शामिल हैं। जब सतगुरु मौक़ा दें तो उनसे उन्ही को माँगे। इससे प्रीति में तरक़्क़ी होगी और काम बनेगा।

सवाल—बहुत से लोग कहते हैं कि गुरुभक्ति इन्सान की पूजा करना है। मालिक के बजाय किसी मनुष्य को पूजना कैसे रवा हो सकता है। शास्त्र कब ऐसे नीच कर्म के लिए इजाज़त दे सकते हैं। कितनेही लोग गुरुभक्ति का जाल फैलाकर ग़रीब भोले गृहस्थियों को लूट रहे हैं। मनुष्य की पूजा करने से क्या हासिल हो सकता है। इन शंकाओं का निवारन हो जावे तो बहुत अच्छा हो।

जवाब—गुरुभक्ति इन्सान की पूजा को नहीं कहते बल्कि गुरू की पूजा को कहते हैं। जो शंकाएँ सवाल में बयान की गई हैं वे सब गुरू को मामूली मनुष्य समझने के कारन पैदा होती हैं। अगर एक मिनट के लिए सतगुरु की गति समझ में आ जावे तो आप से आप इतमीनान हो जावें। मालूम होवे कि सतगुरु सिर्फ़ ऐसे पुरुष को कहते हैं कि जिसका सत्तपुरुष यानी सच्चे मालिक के साथ अन्तर में साक्षात् मेल है—

"सत्त पुरुष जिन जानिया सतगुरु तिनका नाँव"।

खयाल कीजिए कि जितने भी प्रसिद्ध मत हैं उन सब-में अपने अपने तरीक़े पर मनुष्य को बतलाया गया है कि हालत मौजूदा बहुत उत्तम नहीं है। यहाँ पर मनुष्य या जीव अल्प गति में बरतता है और दुख सुख के धक्के खाता है। मालिक का धाम स्वर्ग, बहिश्त, निर्वाणपद, ब्रह्म पारब्रह्म गति बड़े उत्तम घाट हैं। उनके प्राप्त होने पर जीव सच्चिदानन्द स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। हमेशा के लिए या मुद्दत दराज़ के लिए जन्म मरन व दुख सुख से छूट कर निर्मल व अनिर्वचनीय आनन्द भोगता है। खुदा व पैग़म्बर के हुज़ूर में पहुँचकर सरूर अबदी का मज़ा लेता है। ब्रह्म से मिलकर ब्रह्म हो जाता है वग़ैरः वग़ैरः। हालत मौजूदा से हटकर ऊपर बयान की हुई गति को हासिल करने के लिए सब मत अपना अपना तरीक़ा भी बतलाते हैं और सबके सब ज़ोर व दावा के साथ कहते हैं कि अगर कोई हमारे तरीक़े पर चलेगा तो ज़रूर बिल-ज़रूर मालिक, ब्रह्म, खुदा, पैग़म्बर, पीर, खुदावंद मसीह या शुभ कर्म की मदद से उसको यह उत्तम गति हासिल हो जावेगी। और यह भी देखने में आता है कि हज़ारों लाखों आदमी पैरोकार इन मतों के हैं और बहुत से लोग दिलो-जान के साथ हर्फ़ ब हर्फ़ हुक्म व हिदायत की तामील कर रहे हैं। ऐसी हालत में यह नतीजा निकालना ग़लत न होगा कि अगर इन प्रसिद्ध मतों में एक भी सच्चा है (या सब ही सच्चे हैं) और उस (या उन) के पैरोकारों में एक भी

सच्चा है तो ज़रूर उसको वह उत्तम गति हासिल हुई होगी जिसके लिए आशा बँधवाई जाती है और जिसका मुख़्तसिर ऊपर ज़िक्र किया गया। अब ख़याल करना चाहिए कि यह शख़्स जो उत्तम गति को प्राप्त हुआ यानी जिसने मालिक, ख़ुदा या ब्रह्म से वस्ल यानी मेल हासिल किया था जिसने पीर, पैग़म्बर, औलियाओं या देवताओं की दया व मेहर हासिल की, जिसने दुनिया की जानिब से तवज्जह मोड़कर कामयाबी के साथ अपने मत की मंज़िले मक़सूद पर क़दम रक्खा, मामूली इन्सान न रहा। अगर इस क़दर जतन व अमल यानी साधन करने के बाद मंज़िले मक़सूद पर पहुँचने पर भी वह मामूली ही मनुष्य रहा तो उसका साधन करना ही वृथा गया और मत ही ग़लत हो गया-लेकिन सब कोई अपने मत को सच्चा मानता है-इसलिए जब मत को सच्चा माना तो उसपर सच्चे तौर से चलकर ठिकाने पर पहुँचने वाले को उत्तम गति का प्राप्त होना भी मानना होगा। और अगर यह दुरुस्त है तो उस पहुँचे हुए शख़्स का अदब और ख़िदमत करना भी उन लोगों पर जो अभी रास्ते में हैं फ़र्ज़ हुआ। इस तरह के सब लोग इस कामिल से सलाह ले सकते हैं और जो सलाह व मदद उस महापुरुष से अवाम को मिल सकती है साधारन मनुष्यों से हरगिज़ नहीं मिल सकती है। देखने को हमारी तरह से हाड़, माँस, व चाम का पुतला है लेकिन उसके अंतर बिराजमान सुरत को वह गति हासिल है

जिसके लिए हम अभी मेहनत कर रहे हैं और जिसका प्राप्त होना अति कठिन मालूम होता है। ज़ाहिर में साधारन मनुष्यों की तरह से खाता, पीता व काम काज करता है लेकिन असल में परम आनन्द में चूर है। कहने सुनने के लिए बहुत से रिश्तेदार सम्बन्धी रखता है लेकिन वास्तव में सबसे न्यारा और सच्चे मालिक में लवलीन है। क्या ऐसे महापुरुष की निसबत ये सब हालात मालूम होने पर कोई ऐसा शख़्स जो उस गति का शौक़ीन है कि जो उस महापुरुष को प्राप्त है चुप चाप बैठा रहेगा ?। हरगिज़ नहीं। वह फ़ौरन सच्ची दीनता व गरज़-मन्दी से उनके चरनों में गिरकर उस गति के प्राप्त करने की जुक्ति दरियाफ़्त करेगा और दरियाफ़्त होने पर हिदायत के बमूजिब अभ्यास याने अमल शुरू करेगा और कोशिश उसकी यही रहेगी कि जल्द से जल्द गहरी दया उन महात्मा की हासिल करके अपना कारज पूरा कर ले। और चूँकि इस ग़रीब दुखिया के पास सिवाय सांसारिक पदार्थों व दिली प्यार मुहब्बत के कुछ पूँजी नहीं है इसलिए बड़े अदब व प्यार के साथ तन, मन, धन से उनकी सेवा करेगा और ज्योंही ज़रा भी उनसे मदद मिली और अंतर में दया महसूस हुई, जान प्रान से उनके पवित्र चरनों पर क़ुरबान होगा। इस बयान से ज़ाहिर होगा कि जो सच्चे गुरू होते हैं उनकी सेवा ख़िदमत किसी रस्म के

अदा करने के तौर पर नहीं की जाती और नही वे किसी की सेवा ख़िदमत के भूखे होते हैं। सच्चा परमार्थी दया व मदद का तलबगार अपने जीव का कल्यान कराने की गरज़ से उनके चरनों की तरफ़ मुख़ातिब होता है और जिस द्वारे से अपनी यह गरज़ पूरी होती देखता है उस द्वारे यानी चोले से प्रेम प्रीति करता है और प्रेम प्रीति के इज़हार के सिलसिले में इससे सेवा ख़िदमत बन पड़ती है। अगर कोई लोभी, लालची, संसारी मनुष्य गुरुवाई शुरू कर के अपनी मनोकामना सिद्ध करता है तो इसके लिये यातो उस धोखा देने वाले की नियत ज़िम्मेवार है या उन लोगों की अनसमझता जो बिला समझे बूझे उसकी भक्ति में लग जाते हैं। न कि सतगुरु भक्ति का उसूल। ऊपर के बयान से यह भी ज़ाहिर होगा कि सतगुरु भक्ति करना हर शख़्स का काम नहीं है बल्कि सिर्फ़ वह ही शख़्स कर सकता है जिसको सच्चे गुरू मिलें। और सच्चे गुरू उसी को मिलेंगे जो उन की सच्चे दिल से तलाश करेगा और जान बूझ कर किसी ग़लत सलत जगह पर कोई स्वार्थी नफ़ा देख कर न अटक जावेगा। और ऐसी तलाश उसी से बन पड़ेगी जिसको सच्ची गरज़ उस परमार्थी गति के हासिल करने की है जो सतगुरु को प्राप्त होती है और जिसको संसार के भोग बिलास से नफ़रत है। कठ उपनिषद् के पहिले अध्याय में फ़रमाया है "वह आत्मा कि जिसका ज़िक्र सुनना ही बहुत लोगों को प्राप्त नहीं होता और बहुत से मनुष्य जिसका ज़िक्र सुनते हुए भी उसको नहीं जानते उसको बतलाने वाला

कहीं कोई आश्चर्य रूप है, और उसको पाने वाला कहीं कोई बड़ा कुशल पुरुष है उसको जानने वाला कहीं कोई आश्चर्य रूप होता है जब वह किसी बड़े निपुन गुरू से शिक्षा पाया हो और अगर यह आत्मा किसी साधारन यानी आत्मा को प्राप्त न हुए शिक्षक से बतलाया गया हो तो उसका जानना सहज नहीं होता चाहे उस पर कितना ही विचार किया गया हो। जब तक अनन्य यानी ग़ैर मामूली शिक्षक से नहीं बतलाया गया है तब तक उस में गति नहीं होती यानी रास्ता नहीं खुलता। और यह मति दलील बाज़ी से प्राप्त नहीं होती बल्कि तब ही प्राप्त होती है जब कि ऐसे महापुरुष से बतलाई गई हो जिसने आत्मा साक्षात् किया हो न कि सिर्फ़ दलील से समझा हो"।

अब बतलाओ कि ऐसे महापुरुष को कि जिसने आत्मा साक्षात् कर लिया है मामूली मनुष्य कैसे समझा जावे। और जब किसी की आत्मा ने सचमुच परमात्मा यानी सच्चे मालिक से वस्ल यानी मेल हासिल-कर लिया है तो उसके चोले को सच्चे मालिक का मंदिर कैसे न माना जावे और क्यों कर उस चोले की सेवा भक्ति न की जावे। जीव को सच्चे मालिक का दर्शन या तो अपने अन्तर में मिल सकता है या फिर ऐसे सच्चे मंदिर में जहां सचमुच हाड़, मांस, चाम के चोले में विराज कर सच्चा मालिक मनुष्य की तरह बोल चाल करके प्रेमी भक्तों से मेल करता है। जितनी भी सिफ़त व महिमा ऐसे चोले की की जावे जायज़ व दुरुस्त

है। संसार में सच्चे मालिक का सब से ज़्याद: चेतन इज़हार यहही चोला है। और जैसा कि उपनिषद् के ऊपर बयान किये हुए महावाक्य में फ़रमाया है जीवों को आत्मा का दर्शन ऐसे ही चोले से शिक्षा पाने पर मिल सकता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में इस से भी बढ़ कर कहा है यानी यह कि जिस किसी मनुष्य के हृदय में प्रेम भक्ति देव यानी सच्चे मालिक की है और जैसी प्रेम भक्ति देव के लिए है वैसी ही सच्ची भक्ति गुरू के लिए है सिर्फ़ उसी महात्मा को इस उपनिषद् में बतलाये गये विषय के अर्थ समझ में आवेंगे। मंत्र भी लिखा जाता है :—

"यस्य देवे परा भक्ति र्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिताह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥"

इस से बढ़ कर और क्या प्रमान शास्त्रों का गुरुभक्ति के निस्बत दिया जा सकता है।

अलावा उपनिषदों के और ग्रंथों से भी गुरु भक्ति की शिक्षा की गवाही दी जा सकती है और पिछले साध, संत, महात्मा व अवतारों के अनेक वचन इस विषय में पेश किये जा सकते हैं। चुनांचे मौलाना रूम कहते हैं :—

"हर कि ख़्वाहद हम नशीनी बाखुदा।
ओ नशीनद दर हुज़ूरे औलिया॥"

यानी जो कोई मालिक का दर्शन किया चाहता है वह औलिया के हुज़ूर में यानी फ़ुकरा की ख़िदमत में

हाज़िरी देता है। भगवत्गीता में जा बजा कृष्ण महाराज ने अर्जुन को उन की भक्ति करने के लिए आज्ञा दी है। फ़रमाया है :—

मन्मना भव सद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यासि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥
सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

अर्थ—हे अर्जुन! मुझ में मन लगा। मेरा भक्त हो। मेरा पूजनेवाला हो। मुझे नमस्कार कर। तब तू बिला शुबह मुझे प्राप्त होगा। तेरे लिए मैं सच्ची प्रतिज्ञा करता हूं कि तू मेरा प्यारा है।

सारे धर्मों को त्याग कर सिर्फ़ मेरी सरन धारन कर। मैं तुझ को सारे पापों से बचा लूंगा। तू शोक मत कर।

और जगहों पर कहा है कि "जो भक्तजन सब कर्म मेरे में अर्पन करके पूरे दिल से मेरा ध्यान करते हुए मेरे में सरनागत हैं उन्हीं को इस मृत्यु के संसार सागर से मैं फ़ौरन पार कर देता हूं क्योंकि उनका चित्त मेरे में लगा है। अगर कोई निहायत ही दुराचारी यानी बदचलन भी सच्चे दिलसे मेरी भक्ति करता है तो उसे भला ही समझना चाहिये क्योंकि उसने भला निश्चय किया है। जो शख़्स पत्र, फूल, फल व जल मुझे भक्ति से देता है उस शुद्ध हृदय वाले का प्रेम से भेंट किया हुआ वह मैं खाता हूं। मैं

सब भूतों में सम हूं। न मेरा कोई दुश्मन है और न ही कोई प्यारा है। लेकिन जो मुझे भक्ति से भजते हैं वे मुझ में हैं और मैं उन में हूं"। इसी तरह से हज़रत मुहम्मद व हज़रत मसीह के भी बहुत से कलाम इसी मज़मून के मौजूद हैं जिनको उनके कलाम के पढ़ने वाले बखूबी जानते हैं।

अभ्यास किस वक्त करना चाहिये।

बहुत से सतसंगी दरियाफ़्त किया चाहते हैं कि दिन रात में अभ्यास किस वक़्त करना चाहिये यानी कौनसा वक़्त अभ्यास करने के लिए सबसे अच्छा है।

मालूम होवे कि सुरत शब्द अभ्यास हर वक़्त किया जा सकता है और वक़्त की किसी तरह की इसके लिए क़ैद नहीं है। लेकिन चूँकि अभ्यास किसी रस्म के अदा करने के तौर पर नहीं किया जाता है बल्कि सचमुच सुरत यानी तवज्जह की धार को अन्तरमुख करके नाम या स्वरूप या शब्द में जोड़ने के मतलब से किया जाता है इसलिए आम तौर पर अभ्यास कामयाबी के साथ सिर्फ़ उसी वक़्त बन पड़ेगा जबकि अभ्यासी के तन व मन मुआफ़िक़ हों यानी अभ्यासी को सहूलियत के साथ तवज्जह अन्तर में जोड़ने दें। जैसे अगर किसी वक़्त लिखने पढ़ने या और मेहनत का काम काज करने से बदन थक गया हो तो उस वक़्त कुदरती तौर पर अभ्यासी का जी सोने की तरफ़ मायल होगा। ऐसे ही अगर कोई भारी चिन्ता या रंज सिर पर

सवार रहा है तो चित्त बार बार उस चिन्ता या रंज के विषय की तरफ़ जावेगा। ऐसे वक़्तों पर नये अभ्यासी के लिए अन्तरमुख वृत्ति करना अति कठिन होगा और चूँकि यह ज़ाहिर है कि आज कल के ज़माने में चिन्ता फ़िक्र एक क्या बल्कि हज़ारों सब किसी की जान को लगी हैं और काम काज की इतनी भीड़ है कि दम मारने के लिए फ़ुरसत नहीं है इसलिए ज़ाहिर में कोई मौक़ा साधारन मनुष्यों के लिए अभ्यास दुरुस्ती से करने के लिए न रहा, मगर ऐसी निरासता के लिए गुंजायश नहीं है। देखो मन का स्वभाव है कि आदत पड़ जाने से निहायत नामुआफ़िक़ समय पर बहुत से काम ख़ूबसूरती से करता रहता है। जैसे बड़े बड़े कारख़ानों में भारी शोर होते हुए भी लायक़ कारीगर सोच विचार के साथ काम करते रहते हैं हालाँ कि साधारन मनुष्य का वहाँ घुसते ही दिमाग़ परेशान हो जाता है और बाज़ीगर निहायत पतले रस्से पर आसानी से चलता फिरता है जब कि मामूली शख़्स के लिए उस रस्से पर खड़ा होना ही मुश्किल है। इसलिए अगर शौक़ीन परमार्थी कुछ अरसा तबियत पर ज़ोर देकर वक़्त मुकर्रर पर बिला नाग़ा अभ्यास में बैठे और अन्तरी तजरुबों की ज़्याद: परवाह न करे बल्कि अपने तन व मन को अभ्यास के लिए मुआफ़िक़ बनाना ही मुख्य ग़रज़ रक्खे तो उम्मीद व ख़याल से बढ़कर जल्द सहूलियत हासिल हो जावेगी।

अलावा इसके मालूम होवे कि यह ज़रूरी नहीं है

कि रस मिलने ही पर मन किसी काम में लगना शुरू करे। किसी नतीजे की आशा क़ायम होने या किसी तरह का डर तबियत में पैदा होने पर भी मन तवज्जह के साथ उस नतीजे को पैदा कराने वाले या उस भय से बचाने वाले कार्जों में मसरूफ़ हुआ करता है। इसलिए जब तक अभ्यास में रस न मिलने लगे और तन, मन को आदत शोर व शर अन्तरी व बाहरी के होते हुए अभ्यास में लगने की न पड़े उस वक़्त तक अभ्यासी इन उम्मीद व डर के अंगों से काम ले यानी अपने औगुन व पाप कर्म ख़याल में लाकर डरे या सच्चे मालिक की दया और उनके दर्शन प्राप्त होने की आशा से गद्गद होकर चरनों की याद में लगे। हजूरी पोथियों में इस तरह के बहुत से शब्द मुंदर्ज है, अगर खुद इस तरह के ख़यालात दिल में न लासके तो उन शब्दों से मदद ले।

संसार का काम काज सूरज के निकलने से शुरू होता है और ज्यों ज्यों दिन चढ़ता जाता है काम काज का शोर बढ़ता जाता है। होते होते नौ या दस बजे तक पूरे ज़ोर से हंगामा बरपा हो जाता है यानी चारों तरफ़ से शोर व मुख़्तलिफ़ ख़यालात की धारों की भरमार शुरू हो जाती है इसलिए नये अभ्यासी को मुनासिब होगा कि सूरज निकलने से पहले ज़रूर अभ्यास में बैठा करे। रात भर आराम कर लेने की वजह से बदन भी थका न होगा और चीज़ों व ख़यालात से हटे रहने की वजह से मन भी ज़्यादः

चंचल न होगा।

तजरुबे से यह मालूम है कि खाना खाने के थोड़ी देर बाद् जब मेदे में हज़म होने की कार्रवाई शुरू होती है तब बहुत से गुनावन मन में उठने लगते हैं और अगर ऐसे वक़्त यानी खाना खाने के थोड़ी देर बाद अभ्यास में बैठा जावे तो मेदा भारी होने की वजह से वृत्ति नीचे की तरफ़ बहेगी और मेदे की कार्रवाई की तरफ़ मन जाता रहेगा या उन मुख़्तलिफ़ बेमतलब गुनावनों में बहेगा जो मेदे की कार्रवाई की वजह से पैदा होते हैं। इसी तरह पर तेज़ भूख, प्यास की हालत में आम तौर पर मन खाने पीने की चीज़ों की तरफ़ दौड़ता है। इसलिए ऐसी हालतों में अभ्यास न करना चाहिये और मुनासिब होगा कि खाना खाने से एक दो घंटे बाद् और तेज़ भूख प्यास व शौच वग़ैरह से फ़राग़त पाने पर अभ्यास किया जावे।

अलावा वक़्त मुकर्ररः के दिन रात में चलते फिरते, काम काज करते भी ज़रूर सिलसिला सुमिरन ध्यान का जारी रखना चाहिये। इससे बहुत मदद् जमकर अभ्यास करने में मिलेगी और ज़रूर प्रेम प्रीति को खुश्क करने वाले असर दूर रहेंगे।

अगर किसी वक़्त अचानक तबियत में प्रेम भर आवे तो ज़रूर अलहदगी का मौक़ा निकाल कर पाँच सात मिनट हज़ूरी चरनों के जानिब अन्तर में मुख़ातिब होना चाहिये।

ऐसा होता है कि हजूर राधास्वामी दयाल अपने प्रेमी जनों की तरफ़ कभी कभी ख़ास तवज्जह फ़रमाते हैं और ऐसे वक़्तों पर उनके हृदय में अचानक प्रेम प्रीति जाग उठते हैं, ऐसे मौक़ों का ज़रूर फ़ायदा उठाना चाहिये। इससे बहुत ज़्यादः सहूलियत रोज़ाना अभ्यास में मिलेगी।

सतसंगियों को मुनासिब है कि रात को सोते वक़्त दस पाँच मिनट ज़रूर सुमिरन ध्यान किया करें। चाहे बैठ कर करें चाहे लेटे लेटे करें और अगर होसके तो अभ्यास करते करते ही सो जावें। ऐसी नींद अलहदा ही क़ैफ़ियत रखती है और ऐसा करने से बहुत कुछ सँभाल परमार्थी की रहती है।

अगर कभी दिन भर के लिए फ़ुरसत हो मसलन दफ़्तर वग़ैरह में छुट्टी हो तो तीसरे पहर यानी दो या तीन बजे के दरमियान भी ज़रूर अभ्यास करना चाहिये। दुनियाँ का काम काज करने से जो तबियत में बदमज़गी आ जाती है व जी यह चाहता रहता है कि रसीलेपन की हालत आ जावे, उससे बचने व इसके हासिल करने के लिए सिर्फ़ यही तदबीर है कि बार बार दो दो एक एक मिनट के लिए तवज्जह हजूरी चरनों में जोड़ी जावे। और जितनी मर्तबा हो सके दिन रात में अभ्यास करते रहना चाहिये।

मतलब यह है कि अभ्यास करने के लिए वक़्त की

कोई क़ैद नहीं है। मौक़ा व सहूलियत पाने पर अभ्यास किया जा सकता है? लेकिन जब तक मन को शौक़ अभ्यास के लिए मौक़ा निकालने का न हो उस वक़्त तक कोई वक्त मुक़र्रर करके रोज़मर्रह बिला नाग़ा अभ्यास में बैठना चाहिये। होते होते हालत यह हो जावे कि दिनरात बराबर अभ्यास का सिलसिला जारी रहे और किसी वक़्त तार टूटने न पावे।

सवाल—अगर अभ्यास के लिए वक़्त की कोई क़ैद नहीं है तो फिर पोथी के पाठ व आरती व भंडारा करने के लिए भी कोई इस तरह की पाबंदी न होनी चाहिये।

जवाब—वाक़ई कोई ऐसी पाबंदी वक़्त की इन कार्रवाइयों के लिए भी ज़रूरी नहीं है और जैसा कि ऊपर बयान किया गया सिर्फ़ तबियत का मुआफ़िक़ होना ही ज़रूरी अम्र है। अलबत्तह अगर संत सतगुरू मौजूद हों और वह किसी कार्रवाई के लिए कोई वक़्त मुक़र्रर फ़रमावें तो वह कार्रवाई उसी वक़्त करनी चाहिये। मालूम होवे कि इससे यह मतलब नहीं है कि उनके वक़्त मुक़र्रर करने से वक़्त की कोई महिमा हो गई, बल्कि चूँकि उनकी तवज्जह उस कार्रवाई की तरफ़ ख़ास उसी वक़्त मुख़ातिब होगी इसलिए वक्त की पाबंदी के लिए हिदायत की गई।

सवाल—अगर यह दुरुस्त है तो फिर पिछली

जन्माष्टमी के मौक़े पर स्वामीजी महाराज की पैदायश के समय को चुन कर गुरुद्वारे में क्यों उत्सव मनाया गया था और पोथी का पाठ ऐन जन्म के वक़्त शुरू किया गया था?

जवाब—यह ख़याल करना कि हजूर राधास्वामी दयाल अपने जन्म के वक़्त सतसंगियों से पोथी का पाठ कराया चाहते हैं, निहायत ओछी बात है और वाज़ह हो कि वह जन्म का वक़्त आये साल आता है, और अगर किसीको सचमुच इस तरह की टेक जन्म के वक़्त की होती तो वह हर साल जन्म के वक़्त का ख़याल रखता। पिछले ६६ सालों में किसीने इस तरफ़ ध्यान न किया। यहाँ तक कि ख़ुद परम गुरू हजूर साहब व महाराज साहब व सरकार साहब ने भी इस तरफ़ तवज्जह न फ़रमाई अब अगर किसी शख़्स ने ऐसा किया तो सिवाय इसके और क्या ख़याल किया जा सकता है कि महज़ पुरानी आदत या संसार की प्रचलित रीति के मुताबिक़ मन ने कार्रवाई की। मुख़्तलिफ़ लोग सालगिरह के दिन ख़ुशियाँ मनाते हैं और नीज़ राजाओं? बादशाहों के राजतिलक व ब्याह शादी के पच्चीस व पचास बरस होने पर जश्न किये जाते हैं, इन बातों का परमार्थ से कोई तअल्लुक़ नहीं है। अगर हजूर राधास्वामी दयाल के संसार में आने के सौ बरस गुज़र ने पर इसी तरह की ख़ुशियाँ गुरुद्वारे में मनाई गई तो कोई बेजा बात न हुई अलबत्तह किसी का यह उम्मीद करना कि जन्म के वक़्त

पोथी का पाठ करने से उसको ग़ैर मामूली दया हासिल हुई या ठीक जन्म की घड़ी आने पर राधास्वामी दयाल गुरुद्वारे में बैठे हुए लोगों की तरफ़ ख़ास तौर से मुख़ातिब हुए, अनसमझता की दलील होगी, जब तक कि उन दयाल ने अपनी ज़बान मुबारक से वक़्त की तक़र्रुरी न फरमाई हो।

—:०:—

इत्तिला।

सब भाइयों को इत्तिला दी जाती है कि हरचंद यहां पर कोशिश यही रहेगी कि "प्रेम सन्देस" हर महिने निकलता रहे लेकिन काम काज की कसरत व नीज़ अपना छापाखाना न होने की वजह से जब तब देरी हो जाने का अंदेशा है। दया करके ऐसे मौकों पर क्षमा करें।

मेनेजर,

"प्रेम सन्देस."